International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 5; September 2018; Page No. 39-41

अरुणाचल प्रदेश के गालो जनजातिय समाज में स्त्री – विमर्श

लीलि तुम्बम रीबा
सहायक प्रोफेसर, देरा नातुंग शासकिय महाविद्यालय, इटानगर, अरुणाचल प्रदेश, भारत|

सारांश
अरुणाचल प्रदेश हरे-भरे पहाड़ियों, घाटियों एवं झरनो से भरा प्रदेश है जहाँ कुल मिलकर २२ जिले है । हरेक जिले में अलग-अलग जाति-उपजाति निवास करते है जिनकी भिन्न-भिन्न बोलियॉ-उपबोलियाँ है । इन्ही जनजातियों के बहुरंगी संस्कृति तथा समृद्ध परम्पराओं एवं प्राकृतिक सुषमाओं से संपन्न अरुणाचल प्रदेश का लोकसाहित्य उन्नत और विविधपूर्ण राज्य है | यहां के लोकसाहित्य के अंतरगर्त लोकगीत, लोक कथाएँ, लोक नृत्य, कहावते और लोकोक्तियाँ आदि समाविष्ट है । और यह बात विशेष ध्यान रखने योग्य है की यहां के लोकगीतों और लोक नृत्यों की प्रस्तुति सामूहिक रूप से होते है और यह अधिकतर स्त्रियों द्वारा ही प्रस्तुत की जाती है । अधिकतर लोकगीत, लोक कथाएँ, लोक गाथायेँ, कहावते, लोकोक्तियाँ आदि स्त्रियों पर ही केंद्रित होती है ।

मूल शब्द : गालो जनजाति, महिला सशक्तिकरण, अरुणाचल प्रदेश |

प्रस्तावना : गालो जनजाति - परिचय

अरुणाचल प्रदेश के पश्चिम सियांग जिले में गालो जनजाति के लोग बसे हुए है । यहां से लेकर आज कुछ अन्य आसपास के जिलों में भी लोग रोजगार, व्यवसाय आदि की तलाश में स्थानांतरण करके बस गए है लेकिन मूल निवासी वे पश्चिम सियांग के ही है । यह जिला संपूर्ण पहाड़ी इलाका है। यहां झूम खेती की प्रधानता है । इस प्रदेश में बहुत सारी नदियां है बल्किकई जिलों के नाम तो उसी इलाके में बहती नदियों पर ही आधारित। सियांग नदी इसी क्षेत्र से गुजरती है और इसी नदी के किनारे सभी गांव बसे हुए है।

हमारे यहां धर्म एवं त्योहारों का भी जीवन में सर्वोच्च स्थान है । हम लोग दोन्यि पोलो अर्थात 'सूर्यचाँद 'सूर्य (माता) और चाँद (पिता) पर आस्था रखते है । चूँकि, भूमंडलीकरण के इस युग में ईसाई धर्म की ओर आकर्षित हो अपना धर्म-परिवर्तन कर चुके है पर अभी तक दोन्यि पोलो धर्म की अवधारणा को कायम रखी हुई है । मैं यहां इस सन्दर्भ में गौर करने के लिए इसका जिक्र कर रही हूँ की 'दोन्यि' यानि ''माता'' अर्थात स्त्री को हमारे गालो लोक साहित्य में सर्वोपरि मानकर पूजा जाता है । स्त्री को ही उपासना में ही हमारे यहां कई लोकगीत मौखिक रूप से मौजूद है।

गालो लोक कथाओं में सृष्टि निर्माण में गालो जनजाति की आस्था और उसमे स्त्री की भूमिका

गालो लोक कथाओ में देवी ''जिमी आने'' ऐसी दिव्य नारी है जिसे समस्त सृष्टि निर्माण का सारा श्रेय दिया जाता है। ''जिमी आने'' के वर्णन से ही हमें यह मालूम होता है की गालो समाज में नारी का स्थान कितना महत्वपूर्ण है । आज भी गालो वंदना गीतो और मंत्रो में उनकी भावपूर्ण, श्रद्धा-पूर्ण, आस्थापूर्ण वर्णन सुनकर हमें यह पता चलता है कि सृष्टि निर्माण से लेकर जीवन के हरेक क्षेत्र में स्त्री योगदान कितना महत्वपूर्ण है । क्योकि इन्ही गालो लोक कथाओं से यह भी जानकारी मिलती है की पृथ्वी और आकाश की रचना के बाद जितनी भी लौकिक तथा अलौकिक शक्तियों तथा जीव जंतुओं का जन्म हुआ उसे ''जिमी आने'' ने ही उत्पन्न किया था। आज जब सारे विश्व में ''महिला सशक्तिकरण'' के नारे का बोलबाला है तो हमें यह जताते हुए गर्व महसूस होता है की इस विषय में तो हमारे जनजातीय गालो लोक कथाओं ने तो "जिमी आने" के द्वारा पहले ही साबित कर दिया था की नारी का रूप अपराजिता, सृष्टिकर्ता का ही है ।

मोपिन देवी- आंयी पिंकू-पिन्त

त्योहारों का हमारे जनजातीय समाज में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान होता है और गालो जनजाति में ''मोपिन'' त्यौहार को अत्यंत ही धूमधाम से अप्रैल महीने के पांच से लेकर सात तारीख को हर साल मनाते है । मोपिन हमारे गालो जनजाति का प्रमुख त्यौहार है जिसमे मोपिन देवियों अर्थात "आन्यि पिंकू-पिन्त" की उपासना की जाती है । मोपिन पर्व कृषि से सम्बंधित त्यौहार है और हमारी ऐसी मान्यता है की देवी आन्यि पिंकू-पिन्त ने ही समस्त आदिम मानवता को खेती करना सिखाया जिसकी वजह से मनुष्य शिकारी और भोजन संग्राहक से खाद्य उत्पादक के रूप में परिवर्तित हुए । यही नहीं मानवता के विकास क्रम में आन्यि पिंकू-पिन्त का अत्यंत ही महत्वपूर्ण योगदान है जिससे अनदेखा नहीं किया जा सकता । समस्त आदि मानव के मार्गदर्शिता के रूप में उन्हें जंगलो में वास करने वाले वन-मानुष से कृषि कार्य में जुटाकर आत्म निर्भर बनने की सीख एवं बंजारापन या खानाबदोश जीवन से पारिवारिक जिंदगी जीने की प्रेरणा उन्होंने ही दी थी समस्त मानवता को । गालो लोकसाहित्य में स्त्री विमर्श के तहत स्त्री के इन्ही अनूठी रूप का विश्लेषण मैं अपना आलेख कें द्वारा यहां प्रस्तुत करना चाहूंगी ।

आज बदलते वक्त के साथ लोग ''मोपिन'' त्यौहार को तो खूब धूमधाम से मानते है पर आंयी पिंकू-पिन्त के समस्त मानवता के मार्गदर्शिका वाले दिव्य रूप और उनके योगदान के बारे में कितने लोगो को पता है? ऐसे में अपने लोक साहित्य में वर्णित अपनी सांस्कृतिक धरोहरों में बसी अपने समाज के पुराने आदर्शो को जो विलुप्त प्रायः हो रही है और जो विशेषकर स्त्री विमर्श से जुड़ी हुई है

उस पर कार्य करके उसे प्रकाश में लाना मैं अपने परम कर्तव्य समझती हूँ क्योंकि मैं खुद इसी गालो जनजाति से सम्बंधित हूँ ।

गालो लोक साहित्य मे स्त्री विमर्श

भारतीय समाज में स्त्रियों का अस्तित्व का सवाल अंतर्विरोधी विषय है। अगर हम परंपरागत मान्यताओं को देखे तो स्त्री को वहां शक्ति के रूप में माना गया है वही सामाजिक तौर पर, आम भाषा में उससे अबला कहकर सम्बोधित किया जाता है ।

ये सभी धारणाएं, संस्कृति, मान्यताएं, इतिहास आदि पुरुषों के ही द्वारा रचे गए है । पितृसत्तात्मक समाज में पुरुष के अहम् ने स्त्री के छवि को इन्ही दोयम दर्जे पर भ्रमित कर रखे हुए है। कभी उन्हें सर्वोत्तम मानकर देवी कहते हुए पूज्य बताते है तो फिर व्यहार जगत में उसे कामवासना का साधन, मूर्तरूप मानते हुए त्याज्य, भोग्य, माया यहाँ तक कि मुक्ति मार्ग में बाधक मानते है ।

लोक कथा 'तोपों गोने' जिसपर लेखक जुम्सी सिराम ने 'शिला का रहस्य' नामक उपन्यास रचा है । यह एक खूबसूरत गालों ग्रामीण युवती की त्रासदी भरी कथा है जिसमें उसे अपनी पुरानी पारम्परिक विधियों एवं नियमों के अवहेलना करने की इतनी बड़ी सज़ा दी जाती है कि उसे उसकी विवाह की रस्म के बाद विदाई के समय रास्ते में ज़बर्दस्त शिला यानि कि पत्थर क़े रूप में सदा के लिये परिवर्तित कर दिया जाता है । जब वह पत्थर के रुप में तब्दील हो रही होती है और उसके दोनो पैर पत्थर में परिवर्तित हो चुकी होती है तब उसका सारा परिवार लाचार रोता हुआ देखता ही रह जाता है चाहकर भी कोई उसे नहीं बचा पाता। उसके भाई कुल्हाड़ी से उस पत्थर को जिस पर उसकी बहन बैठी पत्थर बन रही होती है उसे काटतें हुये अपनी बहन को बचाने की नाकाम प्रयास करता है पर सफल नहीं हो पाता क्योंकि नियति को कौन टाल सकता है ? यह तो विधि का विधान है । जिस प्रकार नायिका तोपो गोने सामाजिक मान –मर्यादाओं एवं नियमों – नीतियों की बलि चढ़ गई थीं क्या आज भी स्त्रियां इन्हीं कोरे सामाजिक नियमों की भेंट नहीं चढ़ रही ? इन्हीं बंधनों में जकड़ी हुई नहीं है ? आज भी हमारे जन जातिय समाज में मर्दों के बनाये सारे नियम कानूनों पर चलने के लिये केवल स्त्रियों को ही मज़बूर किया जाता है । तमाम तरह के रोक- टोक लड़कियों के लिये बचपन से ही तय कर दी जाती है । कि अगर उसका पालन नहीं करोगी तो तोपो गोंने जैसे पत्थर मे तब्दील हो जाओगी ।

इसी प्रकार एक और सुप्रसिद्ध लोक कथा है 'जाई बोने' जो गालो लोक साहित्य के एक अत्यंत ही सुन्दर गीति -नाटक है जो मुख्य पात्र या नायिका 'जाई बोने' पर ही केंद्रित है । यह एक प्रेमकथा है , इसमें ख़ूबसूरत 'जाईबोने' पर आसक्त खलनायक 'दिदुकुब' उसे लुभाने क़े लिये तरह तरह के प्रलोभन देते है । पर सीधी – सच्ची और अपने प्रेमी 'बिर्तापु' के प्रति समर्पित जाईबोने टस सें मस नहीं होती । नायिका के नायक 'बिर्तापु' के प्रति प्रेम - आकर्षण से जला भुना खलनायक 'दिदुकुब' छल कपट से उन दोनों के प्रेम में बाधाये पैदा करते रहते है । और अन्त में इन्हें ज़हर देकर मार डालते है मगर मरते मरते ये दोनों प्रेमी जन एक दूसरे क़े बाहों में दम तोड़ते है और सदा के लिये प्रेम को अमर हो जाते है ।वह अपने प्रेम की कीमत अपना जान देकर ही चुकाती है और इस तरह अपना प्रेम को अमर कर जाती है । यहां प्रश्न है स्त्री के अस्तित्व का , स्त्री क्या चाहती है ? क्या उसे इतना भी अधिकार नहीं कि वह अपने पसंद का जीवनसाथी चुने , अपनी ज़िंदगी के फैसलें खुद करे ?

इस प्रकार एक और लोक कथा है 'तिंगि आलुक' जिसपर लेखक जुमसी सिराम ने 'आइ आलुक' नामक लघु उपन्यास रचा था । वह भी हमारे जन जातिय समाज में व्याप्त बाल विवाह जैसी सामाजिक कुरीतियों पर आधारित है । यह बाल विवाह सामन्य बाल – विवाह नहीं बल्कि ऐसी बाल विवाह है जिसमें जब औरतें गर्भवती होती है अर्थात जब शिशु माँ के गर्भ में पल रहे होते है तभी अभिभावक उसकी शादी तय कर देते थे जिसे हमारी गालो भाषा में नेप्प न्यिदा कहते है ।जन्म से पहले ही फैसला कर डालते है कि पैदा हो कर थोड़ा बड़ा होंने पर उसको किसके साथ ज़िंदगी बितानीं है । पैदा होने पर अगर लड़का हुआ और उसकी तयशुदा पत्नी पसंद आयीं तो ठीक और अगर पसंद नहीं तो उसे तो रखे ही दूसरी और तीसरी भी विवाह कर लाये, आखिर मर्द है । पर लड़कियों को तो मजबूरन निभानीं पड़ती है । ना करने पर बेड़ियों जिसे हमारी जन जातिय भाषा में 'लेपा' कहते है उसमें जकड़कर भूखे प्यासे रखकर तरह तरह के यातनाये दी जाती है जब तक वह हार न मान ले ।

यहीं नहीं हमारे यहां कुछ सामाजिक अंधविश्वास और कुरीतियां भी है और आम धारणा है की स्त्री कमजोर होती है जो की गलत है। पूर्वोत्तर भारत के हिमालयी क्षेत्रों में भी लगभग यही स्वर गूंजती है । पर हमारे इतिहास गवाह है की नारी ने विशेषकर हमारी गालो जनजाति के स्त्रियों ने इन्हीं दुर्गम पर्वतों को अपने मेहनत और लगन के बलबूते पर अपना आशियाने का रूप देकर अपने कोमल हाथों से अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए कभी जंगलों में से खाद्य सामग्री जुटाकर तो कभी खेतों में काम करके जूझती आई है । इनके कोमल हाथ कभी दिनभर खेतों में कठिन श्रम करके फिर सुबह शाम रसोई में बर्तनो में गूंज पैदा करती है तो कभी बुखार से तपती माथाओं पर शीतल, कोमल मरहम में तब्दील हो जाती है । फिर भी इनकी तमाम कुर्बानियों की उपेक्षा करके इन्हें कई बार उपेक्षित जिंदगी जीने को मजबूर कर देते है ।

पारम्परिक गालो मकान गांव जो की कुछ ऊँचाई पर मचान जैसी ही बनी होती उस पर चढ़ने के लिए सीढियाँ बनीं हुई होती है । हमारे यहां यह रीति है कि मुख्य प्रवेश द्वार जिस पर मजबूत और सुन्दर सीढ़ी लगी हुई होती है जिसे "न्यिलो कोदा / कोबा" कहते है उस पर स्त्रियों का चढ़ना या प्रवेश एकदम वर्जित है । स्त्रियों के लिए अलग से "न्यीम कोदा / कोबा" या सीढ़ी और प्रवेश द्वार होती है जो मकान के पिछवाड़े कि ओर लगी हुई होती है । वही स्त्रियों कें आवाजाही के एकमात्र तयशुदा रास्ते होते है । स्त्रियों का सिर्फ यहां पर ही निषेध नहीं है बल्कि घर के अंदर बैठने की व्यवस्था भी कुछ इस प्रकार होती है की द्वार के सामने वाली दिशा जो रोशनीदार होते है वह घर के मर्दों के लिए निर्धारित होती है और पिछवाड़े की ओर वाली दिशा महिलाओं के लिए । अगर कोई महिला इस रिवाज का उल्लंघन करती है तो उससे अत्यंत ही अशुभ मन जाता है। इस प्रकार ओर भी कई सामाजिक कुरीतियों हमारे गालो समाज में व्याप्त है जों जब-तब हमे यह कटु एहसास दिलाते रहते है कि स्त्रियां कमज़ोर है। लैंगिक समानता Gender Equality केआज के आधुनिक युग में इसकी बिल्कुल भी ज़रूरत नहीं है । हमें हमारे जनजातिय समाज में से ऐसी कई सामाजिक कुरीतियों का खुलासा करते हुए उस पर चिंतन मनन करके उसे बदलने की सख़्त जरूरत है और यही समय की भी माँग है क्योंकि ज़माने को ज़माने के साथ बदलना है तभी तो एक आदर्श समाज की स्थापना संभव है।

गालो लोक सुभाषितों में स्त्री

इसके तहत गालो स्त्री सम्बंधित कहावते-लोकोक्तियों, सूक्तियों और स्त्री, गालियों में स्त्री, लोरी गीतों में अभिव्यक्त नारी का रूप आदि ।
हमारे गालो लोकोक्तियों में नारी का जो चित्रण है उसमे कुछ व्यंगात्मक भी है जैसे-

"न्यीम लोक यासु अ, अम लोक यासु अ"

अर्थात, जिस प्रकार एक चिंगारी के देर ही काफी होती है सरे गांव को जलाकर रख करने में, वैसे ही अविवेकी नारी के कलह से घर-परिवार बिखेरने में देरी नहीं लगती और सारे फसाद एवं कलह की वजह स्त्री ही होती है । इसी प्रकार नारी के कथन को सही नहीं मानते हुए कहावत है "ओमे न्यीम मेंकोर ब" अथवा औरतों हैसे अविवेकी बातें करना । उसी प्रकार ''ओमे न्यीम आगोम अ दुंगा दूरा" अर्थात कार्य तो कुछ हुआ ही नहीं बस गांव भर में ढिंढोरा पीटना ।
गालो लोकगीतों में भी नारी को केंद्रित कर गाए जाने वाले कई गीत है । यह सब लोकगीत हमारे ग्रामीण जीवन का अत्यंत ही महत्वपूर्ण अंग है जो कहीं लिखित रूप से ही जिन्दा है । इन लोकगीतों में ही नारी संवेदना का बहुत ही सुन्दर एवं मार्मिक रूप छुपी हुई होती है । ऐसा ही गालो लोकगीत है - "आने यो आन्ना" और 'आनू नू नाम' जिसमे सम्पूर्ण स्त्री जीवन का जन्म से लेकर उसका बचपन, किशोरावस्था, विवाह, दांपत्य जीवन, मरण आदि समस्त जीवनधारा का ब्यौरा है । यह अत्यंत ही मार्मिक लोक गीत है जिसे विवाह समारोह या खास अवसरों आदि में बड़े ही चाव से गाया जाता है ।
आज भूमंडलीकरण के इस युग में मौखिक अभिव्यक्ति के इन विविध देशज विधाओं के विलुप्त होने का भय मंडरा रहा है । इन्ही बातों को मद्देनजर रखकर अपने इस आलेख का प्रमुख उद्देश्य स्त्री-विमर्श के साथ इन् विलुप्तप्राय लोक विधा के विविध आयामों पर प्रकाश डालते हुए उससे लोगो के चिंतन में लाना ही है साथ ही गालो स्त्री जीवन पर भी इन्ही लोक-साहित्य के विवेचन के द्वारा सही ब्यौरा प्रस्तुत करना ।
जैसे कि, मैंने पहले भी कहा कि हमारे भारतीय समाज में स्त्रियों का अस्तित्व का सवाल अंतर्विरोधी विषय है। अगर हम परंपरागत मान्यताओं को देखे तो स्त्री को वहां शक्ति के रूप में माना गया है वही सामाजिक तौर पर, आम भाषा में उसे अबला कहकर सम्बोधित किया जाताँ हे ।
हमारे समाज में भी कुछ ऐसा ही है , एक तरफ स्त्री का देवी रूप में मान्यता दी जाती है जैसे ''जिमि आने'', ''आन्यि पिंकू पिन्त'' आदि उन्हें जीवनदायिनी, सृष्टिकर्ता, मार्गदर्शिका आदि के रूप में लोक कथाओं में दर्शाया गाया है वही उसी समाज में स्त्री को कमजोर, माया, विनाशकारी मानकर कहावतें, लोकोक्तियाँ आदि प्रचलित है । ऐसा क्यों हो रहा है ? लोगों की ऐसी मानसिकता क्यों है ? इस पर भी हमें अपना ध्यान केन्द्र करना ज़रुरी हैं क्योंकि स्त्री विमर्श का अर्थ तभी मायने रखती है जब वह न केवल हम उसके सकारात्मक पहलुओं की ही नहीं बल्कि उसके नकारात्मक पहलुओं पर भी गौर करे ।वैसे, इस विषय पर लिखना है तो इसका क्षेत्र पुस्तकों या पुस्तकालयों तक सिमित न होकर गालो जनजाति के गांव, झरनो, खेतों, पहाड़ियों तक फैला हुआ है ।

सन्दर्भ

1. ए, फिलॉस्फी ऑफ़ नेफा - वेरियर एल्विन
2. भाषा संस्कृति ओर साहित्य - डॉ. हरीश कुमार शर्मा
3. अरुणाचल प्रदेश के गालो जनजाति ओर उसकी सामाजिक व्यवस्था - डॉ. धर्मराज सिंह
4. मौखिक जानकारियां - अपने ताऊजी एवं ग्राम प्रधान श्री नयादो रिबा - (ग्राम - पागी, जिला - पश्चिम सिआंग, अरुणाचल प्रदेश)
5. आइ आलुक - लेखक जुमसी सीराम।
6. श्रीमान जोमन्या सिराम – उप निदेशक (सेवा निवृत) कला एवं संस्कृति विभाग अरुणाचल प्रदेश ।